ISSN:2583-8849



कृष्ण बिहारी पाठक
व्याख्याता हिंदी
तिरुपति नगर हिंडौन सिटी, जिला करौली राजस्थान

तुलसी की सर्जना में मेघ और वृष्टि

प्रकृति के विविध अवयवों के समान ही मेघ और वृष्टि भी मानव जीवन और समाज को कितने ही कोणों से स्पर्श करते हैं।अपनी छाया की माया से पर्वतों को नीलवर्णी करते हुए नीलकंठी मयूरों को नृत्यातुर करने वाले मेघ रति भाव के आलंबन हैं तो गर्जन-तर्जन की विप्लव ध्वनि के साथ वे वीर रस को निमंत्रण देते हैं। विस्तीर्ण गगनांचल में खंड-खंड प्लावन करते उज्ज्वल मेघखंड निर्वेद का आभास देतें हैं तो भयानक काली अंधियारी रात में सौदामिनी की कड़कड़ाती आवाज और चकाचौंध रौद्र रूप दिखाकर भय का वातावरण बनाती है।

मुक्ताकाश के कैनवास पर बनती बिगड़ती अनंत मेघाकृतियाँ रहस्य और विस्मय का संसार रचती हैं। स्वयं के सर्वस्व को गलाकर बरस सरस कर धरती को हरी भरी बनाने वाले, जीवों की चातक तृषा को तृप्त करने वाले मेघ एक साथ ही करुणा, भक्ति और वात्सल्य के भी अवलंबन हैं।

मानव और मानवेतर प्रकृति की इस आपसदारी को कोई रचनाकार जितनी अधिक पूर्णता और पारदर्शिता से दिखाता है वह उतना ही सफल है और उसकी कृति उतनी ही सार्थक। सच्चे कवि की दृष्टि मानवीय और मानवेतर प्रकृति के बीच की अभिन्न एकात्मकता को चीन्हती है और उसे अपनी सर्जना में उतारती है।

तुलसी की सर्जना में मेघ और वृष्टि अपनी सर्वांगपूर्णता से निखरते हैं।मानस सहित अनेक स्थानों पर तुलसी ने अपने राम के लिए नीलवर्णी मेघों को ही सर्वोपयुक्त उपमान माना है।मानव के भाव-अभाव, संवेदना-सरोकार,व्यवहार-विचार, रुचि और राग से संबंधित शायद ही कोई पक्ष होगा जो तुलसी की सर्जना में मेघ और वृष्टि से सरस शीतल न हुआ हो। तुलसी की सर्जना का रेशा रेशा मेघ और वृष्टि से भीगकर सजल बना हुआ है।

गोस्वामी तुलसीदास की सर्जना में प्रकृति के सजल, सबल, सरस, और सफल बिंब 'मेघ' का स्थान कुछ विशेष और उच्च स्थानीय है। प्रकृति के अनगिनत अवयवों के बीच से मेघ को उन्होंने विभिन्न भाव, संवेदनाओं के सर्वसमर्थ अवलंबन के रूप में लक्ष्य किया है।मानव जीवन की विभिन्न भाव स्थितियों का प्रत्यक्षीकरण वे मेघ के माध्यम से करते हैं। मेघ की गर्जन, तर्जन, छाया, वृष्टि, प्लावन, विसर्जन और विलीनीकरण की कोमल कठोर क्रियाओं के समानांतर मानव जीवन की विभिन्न परिस्थितियाँ भी प्रत्यक्षीकृत होती चलती हैं। मेघ और मानव की इस पारस्परिकता या आपसदारी पर तुलसी का विशेष आग्रह है।राम के लिए मेघ और रामभक्ति के लिए वर्षा का रूपक गढ़ते तुलसी राम भक्ति से उसी तरह अभिसिंचित होते हैं जैसे वर्षाजल से धान -

'बरषा रितु रघुपति भगति, तुलसी सालि सुदास।

रामनाम बर बरन जुग, सावन भादव मास॥"

वर्षा ऋतु को रघुपति भक्ति, भक्तगणों को खेतों में उगने वाली धान,राम नाम के दोनों वर्णों को क्रमशः सावन भादो के दो महीने के सांगरूपक में ढालकर तुलसी ने मेघ वृष्टि और रामभक्ति की पारस्परिकता को प्रमाणित

किया है। वर्षा ऋतु और राम की भक्ति दोनों ही जीवन और जगत को शीतलता और आनंद प्रदान करते हैं,वर्षा जल से जैसे धान समृद्ध होती है वैसे ही रामभक्ति से भक्त समृद्ध होते हैं।दोनों ही चहुंओर खुशहाली, हरियाली, ताजगी और सजीलापन लाते हैं।

तुलसी की सर्जना में मेघ और वृष्टि की स्थानीयता के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि तुलसी की सर्जना में प्रकृति के ये दोनों अवयव भक्ति, श्रृंगार, आध्यात्म,नीतिकाव्य,बिंब विधान, आलंकारिकता, प्रतीक, सरोकार,भाव और रस प्रसंग आदि का स्पर्श ही नहीं करते बल्कि उन्हें भीगकर,डूबकर आकंठ मग्न करते चलते हैं।

वृष्टि और मेघ तुलसी की सर्जना में अनेक स्थानों पर विविधता के साथ उपस्थित होते हैं परंतु किष्किन्धाकाण्ड में इसका विस्तारपूर्वक वर्णन आता है।बालि वध के उपरांत सुग्रीव को राज्य देते समय जब राम वर्षाकाल के चार महीने में 'रहिहउँ निकट सैल पर छाई" कहकर चौमासे को किसी ऊँचे स्थान पर निकालने की बात कहते हैं तो मेघ और वृष्टि का लोकजीवन से जुड़ा व्यावहारिक पक्ष उभरता है जहाँ वर्षाकाल में जल की आवक से नदी नाले भर जाने से आवागमन प्रायः बंद हो जाता है और लोग यथास्थान रुककर चार महीने व्यतीत करते हैं।इसी प्रसंग में आगे चलकर सावन मनभावन में हरितिमा के आच्छादन का सौंदर्य बोध सँवरता है।

मेघ और वृष्टि के प्रकृतिपरक चित्रण में तुलसी का कविमन और भक्तहृदय एक दूसरे को काटते छूते हुए चलते हैं। चौमासे में राम प्रवर्षण पर्वत पर आकर रह रहें हैं, चौमासे में होने वाली वर्षा के कारण वन प्रांतर में हरियाली हो जाना स्वाभाविक ही है परंतु तुलसी के भक्त हृदय को तो चौमासे के आगमन से बढ़कर श्रीराम के आगमन का पुण्य प्रभाव ही चहुँदिस दीखता है। वर्षाकाल में वनप्रांतर का हरा भरा होना प्रकृति सत्य है परंतु इस हरीतिमा का हेतु श्रीराम का आगमन दिखाकर कवि ने यहां हेतूत्प्रेक्षा का विधान भी कर दिया है -

"सुंदर बन कुसुमित अति सोभा,

गुंजित मधुप निकर मधु लोभा।

कंद मूल फल पत्र सुहाए,

भए बहुत जब ते प्रभु आए।।"(किष्किन्धाकाण्ड)

तुलसी के अपने ही व्यक्तित्व में भक्त और कवि कैसे सम पर आकर मिलते हैं जहाँ मंगल रूप भयउ बन तब ते,कीन्ह निवास रमापति जब ते कहकर भक्त ने अपने भगवान को महिमान्वित कर दिखाया है तो कविमन ने कविता में सहज ही आलंकारिकता का अभिनिवेश सरसाया है।

सौंदर्यबोध और सुरुचिपूर्ण संवेदनात्मकता में राम लक्ष्मण दोनों भाईयों की बातचीत की पृष्ठभूमि में वर्षाकालीन मेघाच्छादन और गर्जन तर्जन के बिंबों में कवि प्रथानुसार ऋतु वर्णन की भावभीनी भावभूमि बनती है -

"बरषा काल मेघ नभ जाए,गरजत लागत परम सुहाए।"

प्रकृति के अवयवों और उनकी हलचल में मानव अपने ही मनोभावों की छाया देखता है। श्रृंगार रस के उद्दीपक रूप में प्रकृति चित्रण में एक ही अवयव जो संयोग में सुखकारी लगता है वियोग में वही विरह को बढ़ाने वाला सिद्ध होता है।

गर्जन तर्जन मेघों का नित्यगुण है ।सुख और संयोग की अवस्था में ये गर्जन तर्जन नादात्मकता और जीवन संगीत का आनंदभाव जगाता है वहीं दुख और वियोग में यही गर्जना शंका,भय आदि भावनाओं का संचार करती है।घन घमंड में नभ की घोर गर्जना पर राम के प्रियाहीन डरपत मन मोरा में यही सत्य उद्घाटित होता है। तुलसी की सर्जना में मेघ और वृष्टि भक्ति, श्रृंगार और नीति के तीनों आयामों पर सहजता से उपस्थित होते हैं।

एकाकी राम की विरहाकुल अवस्था के अनुरूप ही मेघ वृष्टि के प्रसंग में प्रकृति चित्रण,रूप वर्णन के स्थान पर नीतिगत उपदेशात्मकता और आध्यात्मिकता का स्पर्श उपस्थित होता है।मेघ और वृष्टि के सूक्ष्मतम अंग प्रत्यंग

और परिवर्तनों को मानव स्वभाव और जीवन स्थितियों से जोड़कर तुलसी ने नीति कविता का भव्य वितान खींचा है।तुलसी के पावस वर्णन को नीतिकाव्य की प्रमाण कोटि कह दिया जाए तो अतिश्योक्ति नहीं होगी।यह बात ध्यान देने योग्य है कि नीति और अध्यात्म के कथन प्रकथन तुलसी ने सीधे श्री राम के मुख से कहलवाएं हैं जिसके चलते यह पूरा प्रकरण आस्था और विश्वास की सात्विक सुगंध से सुवासित हो उठा है।

नीतिकाव्य परंपरा के अनुसार तुलसी ने भी मानव प्रकृति को सुधारने संवारने के लिए मानवेतर प्रकृति की नजीर सामने रखी है। तुलसी सहित उनके पूर्ववर्ती, समवर्ती प्रायः सभी रचनाकारों ने नीति कविता में यही चाल दिखाई है, इसका कारण संभवतः यही है कि मानवेतर प्रकृति अपनी प्रवृत्तियों पर कायम रहती है अपेक्षाकृत मानवीय प्रकृति के। मानव, समय या अवसर देख कर प्रायः अपने स्वभाव से विस्थापन कर लेता है और इसीलिए उसे नीति बताने की सतत आवश्यकता रहती है।

सीता के वियोग में राम का प्रकृति से तादात्म्य वियोग और विरक्ति के मनोविज्ञान के अनुसार श्रृंगार की भूमि से ऊपर उठकर भक्ति,नीति और प्रबोधन की उच्चस्तरीयता पर जाकर ठहरता है। ऐसे में मेघ वृष्टि और इनके सहकारी अवयवों में नीतिगत प्रसंगों का अभिनिवेश और विस्तार बडा मनोहर और स्वाभाविक बन गया है।

मानवेतर प्रकृति बहुत जल्दी या बहुत आसानी से अपनी प्रवृत्तियों से विचलन नहीं करती इसलिए नीति कविता में कवि मानवेतर प्रकृक्ति के अवयवों और उनकी प्रवृत्तियों की नजीर दिखाते हैं। मानव की अपेक्षा मानवेतर प्रकृति की प्रवृत्तियां यह इतनी विश्वसनीय होती है कि इनकी कसम खाई जा सकती है। अब चंदन को ही लीजिए, सुगंध उसका नित्यगुण है, चाहे कुल्हाड़ी उसे काटने की नीयत से आगे बढ़े वह उसे सुगंध पूरित करके ही रहता है। घास अपनी विनीत प्रवृत्ति नहीं त्यागती, और वृक्ष बिना भेदभाव के सबको छाया देना।

नीति प्रसंगों में एक पक्ष यह भी ध्यान देने योग्य है कि ये समग्र सृष्टि की अखंड अद्वैत एकात्मकता की सैद्धांतिकी पर काम करते हैं। परमाण्विक स्तर पर संपूर्ण संसार की इकाई एक ही है अतः प्राकृतिक क्रिया व्यापारों के समानांतर ही जगत व्यवहार का दिग्दर्शन नीति प्रसंगों में रचनाकारों ने बराबर किया है।

फल से लदी डालों का झुकना, जलमग्न बादलों का धरती के निकट आकर झुककर बरसना और इसी तरह गुणी ज्ञानी व्यक्ति का विनीत होना ऐसे ही रचनागत आदर्श हैं-

“बरषहिं जलद भूमि निअराएँ,जथा नवहिं बुध बिद्या पाएँ।

बूँद अघात सहिहिं गिरि कैसे, खल के वचन संत सह जैसे।।”

बूँद और गिरि की पारस्परिकता में खल और संत की समानांतरता दिखाकर केवल दृष्टांत अलंकार पर ही तुलसी नहीं रुके हैं मानवीकरण के साथ-साथ अपने स्वभाव पर टिके रहने वाले संत असंत के आचरण में अतद्रगुण अलंकार का विधान भी अनायास हो गया है।

शैली विज्ञान की दृष्टि से देखें तो मेघ वृष्टि और इनके सहकारी अवयवों के समानांतर मानव स्वभाव के विशेषकों को दिखाकर समानांतरता का काव्य विधान तुलसी ने बड़े कौशल से करके दिखाया है।बूँद आघात के साथ खल के वचन, अविकल पर्वत के साथ संत की सहनशीलता, उथली नदी की गर्जना और अल्प धन पाकर दुष्ट की इतराहट, मिट्टी का संग से जल का और माया के मोह से जीव का कीचड़ में बदलना, नदी जल की सागर में और जीव की ईश्वर में विश्रांति ,तालाब की ढलाई भूमि पर चतुर्दिक जल का सिमटना और सज्जन में सद्गुणों का अभिनिवेश बिंब प्रतिबिंब भाव से इस प्रसंग में तुलसी ने दिखाए हैं -

"समिटि समिटि जल भरहिं तलाबा,

जिमि सदगुन सज्जन पहिं आवा।।"

वर्षाकालीन "दादुर धुनि" में बटुक समुदाय के वेदपाठ की उत्प्रेक्षा का तो कहना ही क्या है , नवपल्लव परिवेष्टित शोभित वृक्षों को साधक की विवेक संपन्नता से जोड़कर तुलसी ने ज्ञान और गुण की शोभा सुरभि का बिंब उपस्थित किया है।मेघ और वृष्टि का सान्निध्य पाकर ही प्रकृति अपने पूर्ण स्वरूप और उत्कर्ष को प्राप्त करती है इसीलिए तुलसी ने इस अवसर को नीतिकाव्य के व्यापक प्रसार और उत्कर्ष की दृष्टि से उपयुक्त माना है।

क्रोध के आवेश में धर्म और विवेक कैसे तिरोहित हो जाते हैं इसे वर्षाजल से प्रक्षालित वनस्पति के बिंब से तुलसी ने जीवंत किया है कि जैसे क्रोध की उपस्थिति में धर्म नहीं दिखता है वैसे ही वर्षा की उपस्थिति में धूल कहीं दिखाई नहीं पड़ती।उत्तम राज्य में जैसे दुष्ट श्रीहीन हो जाते हैं वैसे ही वर्षाकाल में मंदार और जवासा के पत्ते झड़ जाते हैं।हरे भरे अन्न युक्त खेतों से सजी धरती उपकारी पुरुष की संपत्ति सी लगती है तो वहीं वर्षाकाल में रात के अंधेरे में जुटे जुगनू ऐसे लगते हैं जैसे दंभियों का समाज एकत्र हो गया है।

मेघ और वृष्टि की मानव जीवन और जगत से जैसी अभिन्नता है उसे लक्ष्य करते हुए ही तुलसी ने मानवीय प्रकृति के बरक्स मानवेतर प्रकृति की समानांतरता का विधान किया है।मेघ आच्छादन से मेघगर्जन तक,मेघवर्षण से जलसिंचन तक, अंकुरण पल्लवन और पुष्पन तक की एक एक घटना के बरक्स जीवन के बहुरंगी चित्र चरित्र तुलसी उभारते चलते हैं।

इधर जल के अतिरेक और प्रवाह से क्यारियों के टूट जाने के समानांतर नारी का स्वेच्छाचार उधर खेत से घास फूस निकाल कर निराई गुड़ाई करते किसान के समानांतर मद मोह मान को त्यागते सुधीजन।

वर्षाकाल में मेघों के धूपछाही प्रभाव को तुलसी ने एकाधिक परिप्रेक्ष्यों में उभारा है जिनमें उनके कवि और भक्त दोनों रूप प्रकर्ष के साथ उपस्थित होते हैं।कवि के रूप में तुलसी ने बादलों के छाने छँटने से क्रमशः अंधकार और आलोक की उपस्थिति को,सूर्य के छिपने छाने की क्रियाओं को संग कुसंग के रूपक से जोड़ा है। जैसे कुसंग से नष्ट हुआ ज्ञान सुसंग पाकर पुनः प्रकट हो जाता है ऐसे ही बादल और सूर्य का एक दूसरे को ढकना छाना है।

बादल और सूर्य की लुकाछिपी की इस प्राकृतिक घटना को तुलसी ने एक अन्य स्थान पर भक्ति के चश्मे से कुछ निराला ही अंदाज दे दिया है।राम के वनगमन के दृश्य में गोस्वामी तुलसीदास ने मेघ छाया का वर्णन किया है कि जहाँ जहाँ राम जाते हैं मेघ उन पर छाया करते चलते हैं -

''जहँ जहँ जाहिं देव रघुराया।

तहँ तहँ मेघ करहि नभ छाया।।'

श्री राम के ऊपर वन में मेघ भी छाया करते साथ चल रहे हैं, यद्यपि यह पंक्ति अलंकार के रूप में है किंतु यह अलंकार मंगनी का लिबास नहीं, पंक्ति की मूल भावना और राम के व्यक्तित्व की लोक में व्याप्ति के अनुरूप यह अलंकरण छंद के आत्म से एकरस हो गया है। पंक्ति में निहित हेतुत्प्रेक्षा को स्पष्ट करते हुए शुक्ल जी ने लिखा है-

"जिस समय मेघ खंड आकाश में बिखरे रहते हैं, उस समय पथिक के मार्ग में कभी धूप पड़ती है कभी छाया। इस छाया पड़ने को देखकर ..... कह दें कि 'मेघ आपके ऊपर छाया करते चलते हैं' तो अस्वाभाविक न लगेगा। इस कथन द्वारा जिस प्रताप आदि की व्यंजना इष्ट होगी, वह उत्प्रेक्षा का हेतु हो जाएगा।

गोस्वामी तुलसीदास के ही प्रसंग में शुक्ल जी ने मेघ को उस उदात्त भूमि पर प्रतिष्ठित होते देखा है जो संपूर्ण हिंदी कविता में अद्वितीय है। तुलसी की कविता में अनन्य एकनिष्ठ भक्ति को चातक और मेघ के माध्यम से परिभाषित किया गया है। तुलसी की राम के लोकमंगलकारी स्वरूप पर सेव्य सेवक भाव की भक्ति

वी समानता में चातक और मेघ से बेहतर आदर्श दूसरा कौन? एक ओर तुलसी के राम हैं, अधर्मियों का नाश कर धरती का भार उतारने वाले। दूसरी ओर चातक के मेघ हैं अमृत बूँदें बरसा-सरसा कर हरीतिमा से धरती का आधार सँवारने वाले। दोनों जीवनदातार, दोनों में शक्ति के साथ शील और सौंदर्य की अद्भुत छटा। दोनों ही परहित हेतु संचय करने वाले ,दोनों अपरिमित शक्ति के आगार,पर करुणार्द्र और सजल।

तुलसी लोकोन्मुख और लोकधर्मी कवि हैं ।उनकी भक्ति का मार्ग लोक विमुख नहीं बल्कि लोक के बीचोंबीच से होकर गुजरता है।जीवन के यथार्थ चित्रों के चित्रण का ही आग्रह है कि वर्षाकाल या चौमासे के अलावा शरद ऋतु में विरलता से उमड़ने वाले मेघ और घुमड़ने वाली वृष्टि को उन्होंने अपनी कविता का विषय बनाया है।शरत्काल में बरसात की विरलता को दुर्लभ रामभक्ति से जोड़कर यहाँ भी कविता और भक्ति को कवि ने एकरस बनाया है -

“ कहुँ कहुँ बृष्टि सारदी थोरी।

कोउ एक भाव भगति जिमि मोरी।”

तुलसी की सर्जना में मेघ और वृष्टि का वर्णन मानव और मानवेतर प्रकृति के सहकार के साथ चराचर जगत की गहरी रागात्मकता को प्रमाणित करता है ,इसे केवल वस्तु परिगणन या दृश्यावलोकन कहकर चलता नहीं किया जा सकता। तुलसी की सर्जना में विहित मेघ और वृष्टि उनकी काव्य संवेदना और जीवन दृष्टि की अभिव्यंजना है जो लोकोन्मुख लोकधर्मी,सुखदाई और लोक-मंगलकारी है।